निर्मल वर्मा के उपन्यास : रूप विधान और सर्जनात्मकता भाषा

डा.सर्वेश सिंह

आधुनिक उपन्यास विधा को अगर हम ध्यान से देखें तो एक विशेषता खास तौर पर दिखायी देगी। वह विशेषता यह है कि उसके विषय या कथ्य, शिल्प और भाषा के बीच गहरा संबंध होता है और तीनों की एक रूपता और पारस्परिकता ही उसे श्रेष्ठ कृति में परिणत करती है। कथ्य अर्थात् 'विजन' और यथार्थ प्रस्तुति, न कि कथावस्तु। ध्यातव्य है कि उपन्यास की आलोचना में अक्सर कथ्य और कथा को समानार्थी समझ लिया जाता है। लेकिन उससे केवल भ्रम की सृष्टि ही होती है। अतः प्रस्तुत विवेचन में कथ्य को विजन और यथार्थ प्रस्तुति के रूप में ही लिया गया है। उधर 'शिल्प' को भी प्रस्तुत शोध में विशिष्ट अर्थ में ही लिया गया है। वस्तुतः उपन्यास के शिल्प का विवेचन करने का अर्थ उस कौशल को उद्घाटित करना है जिससे उसके आकार की निर्मित हुई है। हर उपन्यास का एक आकार (फार्म) होता है। पर वह स्थापत्य या मूर्ति की तरह दिखाई नहीं देता। वस्तुतः वह पाठक की चेतना में ही बनता है। एक तरह से वह केवल अनुभवगम्य होता है। वह छाया की तरह अस्पृश्य और गतिशील होता है। उसे पकड़ना छाया को ही पकड़ने के समान है। पर यह कोशिश उपन्यास के सौन्दर्यशास्त्रीय अनुभव को समझने में मदद देती है। पाठक की चेतना में रूप ग्रहण करते हुए उपन्यास को अनुभव करने के लिए पाठकीय बोध ही एकमात्र सहारा होता है। मूल प्रश्न है कि पाठक किस प्रकार उपन्यास के रूप को ग्रहण करता है। वह किस स्थान से उपन्यास के निर्मित होते हुए छाया–रस का अवलोकन करता है और किसकी आँखों से देखता है। यही कारण है कि उपन्यास–शिल्प के विवेचन में अवलोकन बिन्दु (प्वाइंट ऑफ व्यू) का महत्व बहुत अधिक होता है।

मोटे तौर पर उपन्यास के शिल्प की दो अत्यन्त प्रचलित प्रविधियाँ होती हैं। एक है दृश्यात्मक तथा दूसरी है – परिदृश्यात्मक। दृश्यात्मक प्रविधि में पाठक बोध के धरातल पर, उपन्यास में घटित किसी प्रसंग पर दृश्य के बिल्कुल पास होता है और उस घटित होते हुए दृश्य तथा चलते हुए वार्तालाप को खुद देखता–सुनता है। पाठक और दृश्य के बीच उपन्यासकार या कथाकार की उपस्थिति नहीं होती। उधर परिदृश्यात्मक प्रविधि में पाठक की चेतना के समक्ष एक फैला हुआ दृश्य या अतीत का विस्तार होता है जिसे वह उपन्यासकार द्वारा प्रदत्त ऊँचाई और दूरबीन से देखता है और अनुभव करता है। उपन्यासकार अक्सर इन प्रविधियों का मिश्रण और उन्हें नाटकीय मनःचित्रात्मक और अंतश्चेतना में प्रवेश की प्रविधियों से समृद्ध करता है। इनके मिश्रण और समेकन से प्रविधियों के असंख्य रूप निर्मित हो जाते हैं जिनका उपयोग उपन्यासकार अपने विषय की जरूरत के अनुसार करता है। यही पूरा विधान, 'औपन्यासिक रूप विधान' के नाम से इस शोध में उल्लिखित किया गया है। इस रूपविधान का ही विशिष्ट तत्व वह भाषा है जिसके सर्जनात्मक प्रयोग से एक उपन्यासकार अपने कथा–संसार और विजन का बिंब खड़ा करता है। निर्मल ने अपने उपन्यासों में जो कथ्य, विषय या विजन रखा है उसको समूचे संदर्भ, चरित्र और कालखण्ड के साथ उसकी समूची विविधता और गतिशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ही तदनुरूप शिल्प का प्रयोग किया है।

प्रस्तुत विवेचन में यही देखना अपेक्षित है कि भाषा को तदनुरूप सर्जनात्मक स्तर देने के लिए उन्होंने किस शैलीय उपकरणों का प्रयोग किया है।

वस्तुतः चित्रणीय विषय और शिल्प के अनुरूप भाषा का वैविध्य उपन्यास की भाषा का प्रमुख गुण होता है। भाषा की अपनी सर्जनात्मकता से न केवल एकरसता दूर होती है वरन् यथार्थ के सटीक और प्रभावपूर्ण अंकन में भी सहायता मिलती है। निर्मल वर्मा के उपन्यास–सृजन या लेखन के पीछे अवश्य एक उद्देश्य होगा। व्यक्ति, परिवार, समाज, देश, मानवता की संवेदना को व्यक्त करना होगा। इसके लिए जो कथा–संसार उन्होंने निर्मित किया है, उसके कई तरह के चरित्र हैं, घटनाएँ हैं, मानसिकता है, सांस्कृतिक–सांमजिक परिप्रेक्ष्य हैं तथा उसकी अभिव्यक्ति के अनुरूप भाषा की सृष्टि की होगी।

प्रस्तुत विवेचन के आरम्भ से पूर्व एक तथ्य जान लेना चाहिए कि शिल्प के स्तर पर निर्मल वर्मा के उपन्यासों को दो भागों में बांटा जा सकता है। दृश्यात्मक प्रविधि के अंतर्गत उनके – लालटीन की छत, 'एक चिथड़ा सुख' तथा 'रात का रिपोर्टर' उपन्यास आते हैं। इसमें कथाकार नरेटर के रूप में भी अपने को अप्रत्यक्ष बनाने की कोशिश करता है, वह अपने पाठकों के समक्ष सर्वज्ञ, सर्वातिशायी और आसन्न वर्तमान रूप में नहीं रखता। वह कथा कहने के बदले उसे प्रस्तुत करता है। पाठक कथाकार से कथा सुनता नहीं, बल्कि प्राप्त करता है। पाठक, कथाकार की आँखों से उसके कथा–संसार का अवलोकन करने लगता है। जैसे प्रेमचंद का गोदान इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। उधर निर्मल के परिदृश्यात्मक प्रविधि वाले उपन्यास हैं – 'वे दिन' तथा 'अंतिम अरण्य'। इसमें कथाकार और पाठक का साथ बना रहता है चाहे वह किस्सागो और कथा स्रोता के रूप में हो, वर्णन कर्ता के रूप में हो या प्रस्तुत कर्ता के रूप में। सामान्यतः इन उपन्यासों में नरेटर 'मैं' के रूप में आया है। 'वे दिन' में 'मैं' उसके नाम इण्डी के रूप में तथा 'अंतिम अरण्य' में 'मैं' के रूप में।

निर्मल के जिन उपन्यासों में दृश्यात्मक प्रविधि का प्रयोग हुआ है, उनका आरंभ लगभग एक समान होता है। प्रायः शांत। एक तरह से शांत, घटना विहीन, जैसे वे पाठक के धैर्य का परीक्षण करते नजर आते हैं। लगभग एक सा अवलोकन वे पाठक को देते हैं, प्रायः इस तरह के अपने सभी उपन्यासों में। जैसे 'एक चिथड़ा सुख' का आरंभ कुछ इस तरह से होता है –

"सुबह के वक्त कोई नहीं आता था। यह उसे अच्छा लगता था। वह अपने कपड़े उतार देता – सिर्फ अण्डरवियर पहनकर छत पर चला जाता। लेट जाता। लम्बी–लम्बी सांसे खींचने लगता। हवा उसके फेफड़ों में घूमने लगती। रात की बची–खुची नींद उन सांसों में बह जाती।"1

इस तरह 'रात का रिपोर्टर' का यह थोड़ा, पर थोड़ा ही आकर्षित करता आरंभ देखें –

"टेलीफोन बूथ के शीशे से वह बाहर दिखाई दी – एक छोटी–सी लड़की साइकिल के पिच के टायर को एक सूखी शाख से हाँकते हुए ले जा रही थी। टायर कभी आगे निकल जाता तो वह भागते हुए उसे पकड़ लेती, कभी वह आगे निकल जाती और टायर की रबड़ कोलतार की चिपचिपाती सड़क पर अटक जाता, लड़खड़ा कर गिर जाता, वह पीछे

मुड़कर उसे दुबारा उठाती, सीधा करती, अपनी शाख हवा में घुमाती और वह मरियल मेमने सा फिर आगे–आगे लुढ़कता जाता।"2

लगभग ठीक इसी तरह 'लालटीन की छत' का आरंभ काया का लालटीन की छत को छोड़कर हास्टल जाने से होता है। कथ्य जो इन उपन्यासों में कमोवेश हर स्तर पर एक सा ही है अर्थात् मानवीय दुःख, भय, अंदर का अकेलापन, संत्रास, असफल प्रेम, कुंठित मनःस्थिति, विभाजित व्यक्तित्व, पराएपन व निर्मूलता का बोध (वे दिन) – इस प्रकार कथा के आरंभ से ही उनका बीजारोपण हो जाता है। 'रात का रिपोर्टर' में तो आगे का संकेत नहीं मिलता पर 'एक चिथड़ा सुख' में 'सुबह के वक्त कोई नहीं आता तो यह उसे अच्छा लगता था' या 'लाल टीन की छत' में काया 'पीछे मुड़कर लालटीन की छत को देखती है' जैसे वाक्यों से कथा और पात्रों का हल्का सा संकेत मिल जाता है। एक में जहाँ एक उदासीन पात्र है जो आगे निरंतर अकेलेपन और अजनबीपन का शिकार होता जाता है तो दूसरे में, काया भी अकेलेपन और असुरक्षापन में जी रही है। भाषा में बस इतने ही संकेत हैं। तनाव में हल्की कथा अवलोकन बिन्दु' के अनुरूप।

उधर 'वे दिन' और 'अंतिम अरण्य' का आरंभ अधिक उत्सुकता प्रधान है। ये दोनों उपन्यास परिदृश्यात्मक प्रविधि के आधार पर लिए गए हैं। 'वे दिन' में मैं (इण्डी) के रूप में कथाकार उपस्थित हैं तो वहीं 'अंतिम अरण्य' में वह 'मैं' के रूप में है। 'वे दिन' पांच भागों में विभक्त है। कथा का आरंभ अंत से होता है। इण्डी की रायना की स्मृति के साथ जो इतना ही आसान है 'जैसे हम–किसी बचपन की धुन को लंबी मुद्दत के बाद पियानों पर खेलते हैं। वहीं 'अंतिम अरण्य' का आरंभ कुछ यों होता है –

"वह आ रहे हैं। मैं उन्हें दूर से देख सकता हूँ। मैं कोशिश करता हूँ कि यह जान सकूँ कि वह किसी के साथ है या अकेले? लेकिन यह असंभव है। वह ढलान के ऐसे कोण पर है, जहाँ दूसरा हो भी तो दिखाई नहीं दे सकता। मैंने कोशिश छोड़ दी है। वे अब पेड़ों के अंतिम झुरमुट में चले गए हैं, जिसकी हरियाली छत पर डूबते सूरज की एक पीली परत फैली है। उसके ऊपर परिंदों का रेला है और उसके ऊपर आकाश, तारे, हवा .....और फिर कुछ भी नहीं।"3

स्पष्ट है कि दोनों ही उपन्यासों का आरंभ एक संघनित गद्य से होता है। एक खास तरह की नाटकीयता भी विधान में है। दोनों में ही निर्मल की संवेदनशील भाषा का प्रसार होता है जो उनमें आगे और भी गाढ़ा होता जाता है। विशेषकर इन उपन्यासों में जिनमें कि नैरेटर खुद उपस्थित है, उसकी भूमिका भी दोहरे स्तर की है। एक तरफ तो वह पात्रों का सामना करते दिखता है तो दूसरी ओर कथा–सूत्र भी पाठक को देता रहता है। 'अंतिम अरण्य' का यह दृश्य उस संदर्भ में महत्वपूर्ण बन पड़ा है –

"लेकिन दूसरे ही क्षण मुझे लगा ..... मैं कितना गलत था। वह सुन नहीं रहे सिर्फ देख रहे थे। थोड़ा सा पीछे हटकर अपने घर को देख रहे थे, कुछ वैसे ही जैसे थोड़ा सा पीछे हटकर हम किसी पेटिंग को देखते हैं। दो पहाड़ियों के फ्रेम में जड़ी उनकी काटेज अपने भीतर की रोशनियों में चमचमा रही थी। अँधेरा कहीं था तो सिर्फ वहाँ, जहाँ वह खड़े थे।

अपनी झुकी हुई पीठ, हिलती हुई छड़ी और बुझी हुई टार्च के साथ ..... चोरों की तरह वह अपने घर को नहीं, मैं उन्हें देख रहा था।"4

यहाँ 'उनका' थोड़ा सा पीछे हटकर घर को देखना उपन्यास के बाद की कथा का संकेत दे जाता है और इस तरह नैरेटर पेटिंग की तरह देखने में पात्र की अपनी मनःस्थिति का संकेत देकर भावी कथा के विकास का सूत्र भी एक पाठक को दे देता है। ठीक इसी तरह इण्डी 'वे दिन' में स्मृतियों में रियाना को यादकर आगे का संकेत दे देता है। यहाँ हम देख सकते हैं कि शिल्प के साथ भाषा की संपृक्ति कितनी सहयोगी बन पड़ी है और भाषा इससे अधिक एक सर्जनात्मक भूमिका भी निभाती नजर आती है।

निर्मल के उपन्यासों में और प्रायः सभी उपन्यासों में ऐसे स्थल मिलते हैं जहाँ 'अंतश्चेतना में प्रवेश' की प्रविधि उपयोग में लायी गई है। अनेक स्थलों पर ऐसा होता है कि कथाकार नैरेटर पात्रों स्थितियों से अलग–थलग न रहकर सहसा उनकी चेतना में प्रवेश कर जाता है और पाठक एक नए बिन्दु से कथा का साक्षात्कार करने लगता है। इस अवलोकन बिंदु से प्रस्तुत की जाने वाली कथा की भाषा का रूप भी बदल जाता है। ऐसे स्थलों पर पात्रों की चेतना उनकी भाषा के रूप में ही सामने आती है और कथा में एक नयी चमक पैदा हो जाती है। निर्मल के उपन्यासों में ऐसे अनेक स्थल हैं, केवल कुछ ही यहाँ द्रष्टव्य हैं –

"किंतु उस दिन मैं वहाँ था, मैं खुद अपनी नोट बुक पर अपने को लिखता हुआ, दर्ज करता हुआ ..... पहली बार मुझे पता चला कि शब्दों को तुम सुनते हो, लेकिन आवाजों को देखा जा सकता है, सन्नाटें की दीवार पर वे फ्रिस्कोज हैं, जिनके बीच गुस्से, पीड़ा, पछतावे का पलस्तर झरता रहता है ..... मैं गुसलखाने में खड़ा था और वे कमरे में बैठे थे, उनकी आवाजों के कोने में सुखी और सुरक्षित, दूसरे लोगों से अलग रहकर जो सुख आता है वह आँख पर पट्टी बांधकर आता है .....।"5

"हम कितनी चीजों के काबिल होते हैं, जो हमारे साथ घटती हैं ....क्या एक दुखद विवाह के बाद मैं इस काबिल था कि बिंदु से प्रेम कर सकूं .....क्या मुझे पहले से ही चेतावनी नहीं मिल जानी चाहिए थी कि जो आदमी अपनी पत्नी से प्रेम नहीं कर पाता, वह किसी दूसरी लड़की को चाहने की काबिलियत अर्जित नहीं कर सकता ..... नहीं, नहीं, काबिलियत कोई कसौटी नहीं ..... कि हम क्या करते हैं और क्या करने के योग्य हैं – वे अगर अनूप भाई को पकड़ सकते हैं तो मुझ जैसे पत्रकार को.....।"6

उपर्युक्त दोनों उपन्यास दृश्यात्मक प्रविधि वाले हैं। उधर, परिदृश्यात्मक प्रविधि वाले उपन्यासों 'वे दिन' और 'अंति अरण्य' में अंतश्चेतना में उतरने की प्रविधि थोड़ा भिन्न है। यहाँ प्रायः नैरेटर खुद इण्डी (वे दिन) और मैं (अंतिम अरण्य) के रूप में कथा–सूत्र अपने हाथ में लिए रहता है। विशेषकर 'अंतिम अरण्य' में तो वह कथा का एक पात्र ही बन गया है। स्वयं उसकी चेतना का यह रूप देखें –

"कभी–कभी मैं सोचता हूँ कि जिसे हम अपनी जिदंगी, अपना विगत और अपना अतीत कहते हैं, वह चाहे कितना यातनापूर्ण क्यों न रहा हो, उससे हमें शांति मिलती है। वह चाहे कितना उबड़–खाबड़ क्यों न रहा हो हम उसमें एक संगति देखते हैं। जीवन के तमाम

अनुभव एक महीन धागे में बिंधे जान पड़ते हैं। यह धागा न हो, तो कहीं कोई सिलसिला नहीं दिखाई पड़ता, सारी जमापूंजी इसी धागे की गांठ से बंधी होती है, जिसके टूटने पर सब कुछ धूल में मिल जाता है। .....वे हमारे वर्तमान के निगेटिव हैं ..... सफेद रोशनी में पनपने वाले प्रेत ..... जिन्हें हम चाहें तो बंद स्मृति की दराज से निकालकर देख सकते हैं। निकालने की भी जरूरत नहीं ..... एक दृश्य को देखकर दूसरा अपने आप बाहर निकल आता है, जबकि उनके बीच का रिश्ता, कब से मुरझा चुका है।"7

अंतश्चेतना में प्रवेश की इस प्रविधि में हम देखते हैं कि पात्रों के मन में क्या चल रहा, यह उभर कर सामने आ जाता है। कथा को देखने का एक नया अवलोकन बिन्दु भी प्राप्त हो जाता है। उधर, यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मन में घुमड़ने वाले भावों–विचारों का कोई ओर–छोर नहीं होता। वे अनवरत प्रवाहमान होते हैं। इस संदर्भ में भाषा की सर्जनात्मकता उन उद्धरणों में देखी जा सकती है। प्रायः क्रिया पद विहीन, चमक की भांति पैदा होते शब्द और गतिशील वाक्य विन्यास।

औपन्यासिक संसार में नैरेटर से अधिक भूमिका उन पात्रों की होती है जो वस्तुतः कथा–संसार के अंग होते हैं। उन्हीं के माध्यम से कथा की भूमिका बनायी जाती है तथा उसे विस्तार दिया जाता है। कथा का विजन खड़ा करने में भी उन्हीं का हाथ होता है, क्योंकि इन पात्रों के आपसी व्यवहारों को दिखाते हुए ही कथाकार वहाँ तक पहुँचता है। निर्मल वर्मा के उपन्यासों में शहरी पात्र ही मुख्य हैं। विशेषकर शहरी मध्यमवर्गीय पात्र। उनकी भाषा भी उनकी अपनी स्थिति के अनुरूप है।

'वे दिन' का पात्र इण्डी निर्मूलपन और अकेलेपन से संत्रस्त है। अतः उसकी भाषा भी उसकी इस स्थिति को व्यक्त करती है –

"उस रात पहली बार लगा कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए अँधेरा है – जैसे वह मेरे लिए थी, मैं उसके लिए।"8

उधर 'लालटीन की छत' की काया बालिका है और वयस् परिवर्तन के कारण डर और माता–पिता के बाहर होने के कारण अकेलेपन की शिकार है। यह सब निकलकर एक स्तर पर उसे बोध देते हैं, पर विडम्बनाग्रस्त –

"रेल की लाइनों के बीच वह भरोसा है जो मैं बीरू को दे सकती हूँ। यहाँ ईश्वर है। मैं उस पाप से छुटकारा पा सकती हूँ जो कायर और स्वार्थी लोगों के साथ चिपटा रहता है।"9 उधर, 'रात का रिपोर्टर' का रिशी एक पत्रकार है, दिल्ली का पत्रकार, युवा, जागरूक। पर स्थितियों ने उसे भयभीत बना दिया है। निरंतर एक असुरक्षा बोध उसमें व्याप्त रहता है। उसके वार्तालाप से ही नहीं, उसके सोचने में भी यही झलकता है –

"वे आपको और मुझे कभी भी पकड़ सकते हैं, लेकिन फिलहाल नहीं, फिलहाल वे सिर्फ देख रहे हैं कि क्या हम इस काबिल हैं।"10

'अंतिम अरण्य' के मुख्य चरित्र हैं – उम्र के अंतिम पड़ाव में आ चुके एक वृद्ध। वे सरकारी नौकरी से रिटायर हैं। संबंधों की निस्सारता को अनुभव में लिए हुए वे सबसे निस्संग हो चुके हैं। जीवन में स्मृतियाँ ही बची हैं पर उन्हें भी वे भूल जाना चाहते हैं। एक तरह की आध्यात्मिक विरक्ति का भाव है उनमें –

"वह जाने लगे तो मैं मैंने कहा, बिटिया की चिट्ठी आई है".....
"क्या लिखा है?"
"आपके बारे में पूछा है...."
"मेरे बारे में?" एक शुष्क सी हँसी उनके चेहरे पर चली आई।....
"रात को आओगे तो साथ ले आना।" कुछ और नहीं पूछा। दरवाजा खोलकर भीतर चले गए।11

इस प्रकार हम देखते हैं कि पात्रों के स्तर पर उनकी वैयक्तिक स्थिति के अनुकूल भाषा का प्रयोग निर्मल के उपन्यासों में हुआ है। इस भाषा प्रयोग से उनके कथा–संसार को न केवल विश्वसनीयता मिलती है बल्कि उसे एक व्यक्तित्व भी प्राप्त हुआ है।

पात्रों को उनकी वैयक्तिक स्थिति के अनुरूप चित्रित करने के अलावा निर्मल के उपन्यासों में नैरेटर जब शुद्ध किस्सागो के रूप में आता है तो वहाँ उसकी भाषा एक सम पर होती है या कहें निर्मल का अपना विशिष्ट गद्य भी चलता है। पर जब वह नैरेटर कथा के साथ किसी पात्र की भावनाओं का भी अंकन करने लगता है तब उसकी भाषा एकदम संवेदनशील हो जाती है। एक तरह की आत्मीयता के साथ आंतरिक लय से संपन्न अनुभूति सिक्त भाषा का प्रयोग ही तब ऐसे स्थलों पर चलता है –

"हर दिन एक नया वाक्य, जिसे पढ़ने के लिए वह बस की खिड़की से अपना सिर बाहर निकाल देता – मानो वह चैपल न होकर अखबार का कोई दफ्तर हो ..... लेकिन यहाँ बिल्कुल उल्टा था, यहाँ एक मृत मसीहा के घाव काले बोर्ड पर अपनी सूनी खबर चलती फिरती दुनिया को पहुँचाते थे, एक भेद भरा संदेश, एक भय में अटका संदेश ..... पता नहीं आज उस पर क्या लिखा होगा? .... लेकिन उस दोपहर सौभाग्य से बस की स्पीड इतनी धीमी थी कि बोर्ड के अक्षर सहसा दिखाई दिए – प्रभु उन्हें क्षमा करो, उन्हें नहीं मालूम, वे क्या कर रहे हैं।"12

"नहीं जी यह सबसे बड़ा इल्यूजन है .....आपको लगता है..... सब कुछ नार्मल है और यह सबसे बड़ी छलना है ..... क्योंकि सच बात यह है कि नार्मल कुछ भी नहीं होता, पैदा होने के बाद के क्षण से ही मनुष्य उस अवस्था से दूर होता जाता है, जिसे हम नार्मल कहते हैं ..... नार्मल होना देह की आकांक्षा है, असलियत नहीं। देह का अंतिम सिर्फ मृत्यु के सामने खुलता है, जिसे वह बिल्ली की तरह जबड़ों में दबाकर शून्य में अंतर्ध्यान हो जाती है ..... जैसे एलिस के सामने चैशायर बिल्ली गायब हो जाती है सिर्फ उसकी मुस्कुराहट दिखाई देती रहती है।"13

प्रथम उद्धरण में रिशि की मानसिक संवेदनशीलता व्यक्त हुई है तथा द्वितीय में 'अंतिम अरण्य' के पात्र डॉ. सिंह की जीवनानुभूति व उसकी भावप्रवणता। वस्तुतः ऐसे ही कुछ

स्थल होते हैं जहाँ निर्मल अपने उपन्यासों के पाठक को एक बड़ा अवलोकन बिंदु पकड़ा देते हैं। एक काव्यात्मक ऊँचाई से पाठक फिर नए तरीके से कथा का श्रवण करने लगता है। एक संवेदनशील भाषा यहाँ कथ्य विन्यास रचने लगती है और बिम्बों (मृत मसीहा के घाव काले बोर्ड पर और बिल्ली की तरह जबड़ों में दबाकर) लाक्षणिक प्रयोगों से एक आंतरिक लय से संपन्न अनुभूति सिक्त भाषा बन जाती है। मोटे रूप से कहें तो भाषा काव्यात्मक हो जाती है। ऐसी 'संवेदनशील और काव्यात्मक भाषा' का निदर्शन इसी अध्याय के अगले भागों में विशेष रूप से करने का प्रयास किया जाएगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि निर्मल वर्मा के उपन्यासों की भाषा चित्रणीय जीवन व विषय के अनुरूप सर्जनात्मक है। पात्रों के अपने मनोभावों को वह व्यक्त करने में सक्षम हैं। संवेदनशीलता और काव्यात्मकता के कारण वह कथा की और पात्रों की अनुभूति को वहन करने योग्य हैं। विशेषकर संवेदनशीलता जिसे आगे चलकर भी देखेंगे, उनकी औपन्यासिक भाषा की निजी तथा अतुलनीय विशिष्टता है।

सन्दर्भः

1 निर्मल वर्मा : एक चिथड़ा सुख, पृ. 7
2 निर्मल वर्मा : रात का रिपोर्टर, पृ. 7.
3 निर्मल वर्मा : अंतिम आरण्य, पृ. 9.
4 निर्मल वर्मा : अंतिम आरण्य, पृ. 10.
5 निर्मल वर्मा : एक चिथड़ा सुख, पृ. 55–56.
6 निर्मल वर्मा : रात का रिपोर्टर, पृ. 19.
7 निर्मल वर्मा : अंतिम अरण्य, पृ. 11.
8 निर्मल वर्मा : वे दिन, पृ. 20.
9 निर्मल वर्मा : लाल टीन की छत, पृ. 60.
10 निर्मल वर्मा : रात का रिपोर्टर, पृ. 60.
11 निर्मल वर्मा : अंतिम अरण्य, पृ. 51.
12 निर्मल वर्मा : रात का रिपोर्टर, पृ. 106.
13 निर्मल वर्मा : अंतिम अरण्य, पृ. 100.